राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 1071/2021

लालचंद सोनी पुत्र स्व. लक्ष्मीनारायण, उम्र लगभग 55 वर्ष, डी-15, समता नगर, बीकानेर, राजस्थान।

----याचिकाकर्ता

बनाम

राज्य, पीपी के माध्यम से

----प्रत्यर्थी

याचिकाकर्ता की ओर से	:	स्वयं व्यक्तिगत रूप से उपस्थित
प्रत्यर्थी की ओर से	:	श्री गौरव सिंह, पीपी

माननीय न्यायमूर्ति राजेंद्र प्रकाश सोनी

<u>निर्णय</u>

<u>रिपोर्टेबल</u>

<u>28/03/2023</u>

1. आक्षेप में, विद्वान सत्र न्यायमूर्ति, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम मामले, बीकानेर द्वारा दिनांक 25.10.2021 को पारित आदेश दिया गया है, जिसके तहत विद्वान ट्रायल कोर्ट ने राजस्थान राज्य बनाम लालचंद सोनी और अन्य के सत्र न्यायालय मामला संख्या 7/2016 याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में, इसके बाद इसे "अधिनियम" के रूप में संदर्भित किया जाएगा) की धारा 7 और 13(1) घ और भारतीय दंड संहिता (इसके बाद इसे संक्षेप में आई.पी.सी. की धारा 120 ख के तहत आरोप तय करते हुए, उसे अपराध के लिए मुकदमे का सामना करने का निर्देश दिया है। उक्त मामला पुलिस चौकी ए.सी.बी. (विशेष इकाई), पुलिस स्टेशन सी.पी.एस., ए.सी.बी., जयपुर में दर्ज एफ.आई.आर. संख्या 252/2015 से उत्पन्न होता है।

2. वर्तमान विवाद की उत्पत्ति का पता विनोद कुमार कुमावत द्वारा दर्ज एफ.आई.आर. संख्या 252/2015 दिनांक 14.09.2015 से लगाया जा सकता है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ आरोप लगाया गया है कि वह देव इंफ्रास्ट्रक्चर जयपुर के नाम और शैली में काम करने वाला एक विद्युत ठेकेदार है। 03.09.2014 को उन्हें यू.आई.टी. बीकानेर द्वारा बीकानेर शहर में विभिन्न स्थानों पर हाईमास्ट लाईटें लगवाने हेतु कार्य आदेश प्रदान किया गया। उन्होंने जून 2015 तक काम पूरा कर लिया था। उनके द्वारा कार्य पूरा होने पर किए गए काम को माप पुस्तिका (एम.बी.) में दर्ज किया गया था और दरों की गणना करने के बाद पहला और अंतिम बिल तैयार किया गया था, जिसे यू.आई.टी. इंजीनियरों द्वारा जांचा गया था। यू.आई.टी. और लेखा शाखा को भेज दिया गया। जब शिकायतकर्ता बिल के भुगतान के संबंध में यू.आई.टी. में एकाउंटेंट के रूप में कार्यरत याचिकाकर्ता से मिला, तो याचिकाकर्ता ने रिश्वत के रूप में कुल बिल राशि का 4% कमीशन की मांग की, अन्यथा उसके द्वारा दिए गए दिन पर आपत्तियॉ दर्ज कर भुगतान में देरी करने की धमकी दी।

3. उक्त शिकायत प्राप्त होने के बाद, शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के बीच टेलीफोन पर हुई बातचीत को रिकॉर्ड किया गया और 18.09.2015 को मोहम्मद आशिक को याचिकाकर्ता के लिए ₹ 60,000 की रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया।

4. इस स्तर पर अतिरिक्त विवरण अनावश्यक होने के कारण, यह कहना पर्याप्त होगा कि इन आरोपों के आधार पर उपरोक्त एफ.आई.आर. दर्ज कर मामले में जांच की गई। जांच पूरी होने पर याचिकाकर्ता के खिलाफ अधिनियम की धारा 7, 8, और 13 (1) घ और 13 (2) और आई.पी.सी. की धारा 120 ख के तहत आरोप-पत्र दायर किया गया था।

5. आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद, याचिकाकर्ता ने ट्रायल कोर्ट के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 91 के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत यू.आई.टी. बीकानेर से जो दस्तावेज प्राप्त किए गए हैं, वे अभियोजन द्वारा आरोप-पत्र के साथ प्रस्तुत किये गये दस्तावेज से मेल नहीं खाते। उन दस्तावेजों को रिकॉर्ड पर

लेने की प्रार्थना की गई। इस आवेदन को विद्वान ट्रायल कोर्ट ने 02.08.2021 को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि आरोप तय करने के बारे में बहस के दौरान, याचिकाकर्ता यू.आई.टी. से प्राप्त दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियों पर भरोसा कर सकता है।

6. उक्त आदेश से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय के समक्ष एकलपीठ आपराधिक विविध याचिका संख्या 4463/2021 दायर की और इस न्यायालय ने दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियों को न्यायालय के ध्यान में लाने की स्वतंत्रता देते हुए दिनांक 27.08.2021 के आदेश के तहत उक्त याचिका का निपटारा कर दिया।

7. यहां यह उल्लेख करना भी उचित है कि अभियोजन स्वीकृति आदेश दिनांक 31.03.2016 को भी इस एकलपीठ आपराधिक विविध याचिका संख्या 2095/2016 में याचिकाकर्ता द्वारा में भी चुनौती दी गई थी और अन्य बातों के साथ-साथ आरोप लगाया गया कि अंतिम बिल 16.10.2015 को तैयार किया गया था, जबकि जाल 18.09.2015 को बिछाया गया था, जो उनके अनुसार, यह दर्शाता है कि यह पूर्व नियोजित था। बिना तथ्यों पर विचार किए बिना और बिना दिमाग लगाए अभियोजन स्वीकृति जारी कर दी गई। इस न्यायालय ने दिनांक 21.11.2016 के आदेश के तहत उक्त याचिका का निपटारा यह कहते हुए कर दिया कि उक्त मुद्दा याचिकाकर्ता द्वारा ट्रायल कोर्ट के समक्ष आरोप बहस के चरण में उठाया जा सकता है और ट्रायल कोर्ट से यह अपेक्षा की जाती है कि उस पर कानून के अनुसार विचार किया जाए।

8. मामले को विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा आरोपों पर विचार करने के लिए उठाया गया था और उपरोक्त उल्लिखित अपराधों के लिए याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करने का निर्देश देते हुए विस्तृत आदेश पारित किया गया था। हालाँकि, याचिकाकर्ता को अधिनियम की धारा 8 के तहत अपराध से मुक्त कर दिया गया। उक्त आदेश को इसकी तत्काल पुनरीक्षा करने हेतु चुनौती दी गई है।

9. व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होकर याचिकाकर्ता ने तर्क दिया है कि मामले को आगे बढ़ाने के लिए उसके खिलाफ रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं है और उसके खिलाफ कोई भी अपराध नहीं बनता है; वह एम.बी. पेज नंबर 1 से 21 तक कुल

पेजिंग और विवादित बिल के संबंध में कुल 128 पेज की फाइल यू.आई.टी. से जांच अधिकारी 7 द्वारा प्राप्त की गई थी, लेकिन अभियोजन एजेंसी ने अन्य दस्तावेजों के साथ एम.बी. के महत्वपूर्ण 9 पेजों सहित विभिन्न दस्तावेजों को रोक लिया, जिसका अर्थ है कि अभियोजन एजेंसी याचिकाकर्ता को झूठा फंसाने के लिए तैयार थी।

10. यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा सीआरपीसी की धारा 91 के आवेदन के साथ प्रस्तुत किए गए दस्तावेज से पता चलता है कि वास्तव में अंतिम बिल कार्यकारी अभियंता द्वारा 16.10.2015 को ही हस्ताक्षरित और पारित किया गया था और इस तिथि से पहले शिकायतकर्ता का कोई भी काम याचिकाकर्ता के पास लंबित नहीं था।

11. आगे तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता ने शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत के साथ-साथ कार्यकारी अभियंता प्रेम वशिष्ठ, सहायक अभियंता महावीर प्रसाद, और टी.एल.ओ. अपर पुलिस अधीक्षक, एसीबी यूनिट बीकानेर, परबत सिंह के खिलाफ भी प्राथमिकी दर्ज कराई। और गहन जांच के बाद, शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत, प्रवीण कुमार कुमावत कनिष्ठ अभियंता, प्रेम वशिष्ठ कार्यकारी अभियंता और महावीर प्रसाद टाक सहायक अभियंता के खिलाफ आई.पी.सी. की धारा 467, 468, 471, 420, 120-ख, 166 क एवं 167 के तहत विवादित बिल ओर एम.बी. के दसतावेजों के संबंध में दंडनीय अपराध के लिए चालान प्रस्तुत किया गया। उस मामले की जांच के बाद पता चला कि यू.आई.टी. ये सभी इंजीनियर और शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत ने एक दूसरे के साथ मिलकर साजिश रची, माप पुस्तिका (एम.बी.) के साथ-साथ विवादित अंतिम बिल में झूठी और मनगढ़ंत प्रविष्टि की और मूल रिकॉर्ड को मिटा दिया।

12. याचिकाकर्ता द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ अभियोजन की मंजूरी यांत्रिक तरीके से दी गई थी क्योंकि 11 बिंदुओं का जो एसीबी से नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा मांगे गए थे, विभिन्न अनुस्मारक के बाद भी कभी उत्तर नहीं दिया गया था। इस प्रकार, अभियोजन स्वीकृति अपूर्ण दस्तावेजों के साथ-साथ यू.आई.टी. के इंजीनियरों द्वारा फर्जी दस्तावेजों के आधार पर जारी की गई थी।

13. यह तर्क भी दिया गया है कि वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता के खिलाफ पूरी जांच व्यक्तिपरक तरीके से की गई है, याचिकाकर्ता द्वारा दायर और लगातार दो दांडिक विवधं याचिकाओं में इस न्यायालय के निर्देश के बावजूद याचिकाकर्ता को बलि का बकरा बनाया गया। विद्वान ट्रायल कोर्ट आरोप बहस के समय याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों का पालन करने में विफल रहा है और केवल अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत झूठे साक्ष्यों जाली और दागी दस्तावेजों पर भरोसा किया है।

14. यह तर्क भी दिया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा दर्ज की गई एफ.आई.आर. की जांच के बाद, यह अभियोजन का स्वीकृत मामला है कि एम.बी. में हेरफेर किया गया है; कि पूर्व इंजीनियर श्री ओम प्रकाश गोदारा द्वारा जारी मूल एम.बी. को ट्रायल कोर्ट में जमा करने से पहले यू.आई.टी. के तीनों दोषी इंजीनियरों ने मिटा दिया है। याचिकाकर्ता के अनुसार, एम.बी. पर कार्यकारी अभियंता प्रेम वशिष्ठ के पिछली तारीख के हस्ताक्षर हैं, जबकि वह जुलाई, 2015 तक यू.आई.टी., बीकानेर में तैनात नहीं थे, जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि अभियोजन पक्ष ने तथ्यों में हेरफेर किया है ताकि याचिकाकर्ता पर अवैध दायित्व डाला जा सके। यह तर्क भी दिया गया कि याचिकाकर्ता मोहम्मद आशिक नामक व्यक्ति को किसी भी समय नहीं जानता है और यह पहलू बहुत स्पष्ट है जैसा कि मोहम्मद आशिक ने ट्रायल कोर्ट के समक्ष कहा कि वह याचिकाकर्ता को नहीं जानता है, इसलिए याचिकाकर्ता की ओर से कथित रिश्वत लेने का कोई प्रश्न ही नहीं है। इसके अलावा, याचिकाकर्ता और उक्त मोहम्मद आशिक के बीच किसी भी समय का कोई कॉल विवरण नहीं है।

15. आगे तर्क दिया गया कि विवादास्पद बिल पहली बार 06.10.2015 को प्रस्तुत किया गया था और विवादित कार्य का सत्यापन 08.10.2015 को कनिष्ठ अभियंता, सहायक अभियंता और कार्यकारी अभियंता द्वारा किया गया था। अंततः 16.10.2015 को कार्यपालक अभियंता द्वारा भुगतान हेतु बिल पारित कर दिया गया। इस समय से पहले शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत के पास विवादित बिल के भुगतान की प्रक्रिया के लिए याचिकाकर्ता से संपर्क करने का कोई अवसर नहीं था और इस तरह याचिकाकर्ता को झूठा फंसाया गया है।

16. यह तर्क भी दिया गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करते समय ट्रायल कोर्ट ने इन सभी पहलुओं पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया है, इसलिए याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप कानून की नजर में कायम नहीं रह सकते हैं और इन्हें रद्द किया जा सकता है। अंत में, यह प्रस्तुत किया गया है कि शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ जो एफ.आई.आर. दर्ज की गई है वह प्रतिशोध लेने के उद्देश्य से एक उपकरण के अलावा कुछ नहीं थी और इस प्रकार, याचिकाकर्ता ने आग्रह किया कि उसके खिलाफ जो आरोप लगाए गए हैं वे बिल्कुल निराधार हैं और रद्द किए जाने के योग्य हैं।

17. याचिकाकर्ता द्वारा अपने तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा रखा गया: -

1. चंदन कुमार बसु बनाम बिहार राज्य 2014 0 सुप्रीम (एससी) 515
2. पीताम्बर हरवानी बनाम राजस्थान राज्य 2019 0 सुप्रीम(राजस्थान) 862
3. पुलिस निरीक्षक द्वारा राज्य बनाम श्री. टी. वेंकटेश मूर्ति 2004 0 सुप्रीम (एससी) 1049
4. कर्नाटक राज्य बनाम अमीर जनवरी 2007 0 सुप्रीम (एससी) 1196

18. इसके विपरीत, विद्वान लोक अभियोजक ने याचिकाकर्ता द्वारा दी गई दलीलों का कड़ा विरोध किया और तर्क दिया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत अपराध करने के लिए आवश्यक सभी सामग्रियां मामले के रिकॉर्ड पर मौजूद हैं। उनके अनुसार, आरोप तय करने के प्रयोजन के लिए, केवल प्रथम दृष्टया मामला देखा जाना चाहिए और मामले के रिकॉर्ड पर प्रथम दृष्टया आरोप और सामग्रियां हैं जो दर्शाती हैं कि याचिकाकर्ता द्वारा रिश्वत की मांग के संबंध में सभी सामग्रियां रिकॉर्ड पर लाई गई हैं। उनका तर्क है कि यह नहीं कहा जा सकता कि रिकॉर्ड पर प्रथम दृष्टया सामग्री मौजूद नहीं है। इसलिए, आरोप तय करने के आदेश में इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और आरोपों की गंभीरता और जांच में खुलासे को देखते हुए, इस स्तर पर याचिकाकर्ता को आरोपमुक्त करना पूरी तरह से अनुचित है। इस प्रकार, उन्होंने जोर दिया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करने के आदेश में इस

न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

19. विद्वान लोक अभियोजक ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा करते हुए उपरोक्त प्रस्तुत प्रस्तुतियों को पुष्ट किया:-

1. भावना बाई बनाम घनश्याम 2019 0 सुप्रीम (एससी) 1315
2. नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य 2020 0 सुप्रीम (एससी) 45
3. ओंकार नाथ मिश्रा बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली) 2007 0 सुप्रीम (एससी) 1633
4. सज्जन कुमार बनाम केंद्रीय अंवेषण ब्यूरो 2010 0 सुप्रीम (एससी) 885
5. श्रीलेखा सेंटिलकुमार बनाम उप. एस.पी., सीबीआई, एसीबी, चेन्नई 2019 0 सुप्रीम (एससी) 701
6. मध्य प्रदेश राज्य बनाम मोहन लाल 2000 0 सुप्रीम (एससी) 1106
7. भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल 1978 0 सुप्रीम (एससी) 346

20. मैंने व्यक्तिगत रूप से उपस्थित याचिकाकर्ता द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों, उसके द्वारा दायर लिखित दलीलों, विद्वान लोक अभियोजक द्वारा दी गई दलीलों पर विधिवत विचार किया है और मामले के पूरे रिकॉर्ड का अध्ययन किया है। कोर्ट में अवलोकन के लिए केस की मूल फाइल भी मंगाई गई।

21. माननीय उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार बनाम प्रफुल कुमार सामल, (1979) 3 एससीसी 4: एआईआर 1979 एससी 366) के मामले में दिए गए अपने निर्णय में निम्नानुसार कहा है:-

10. इस प्रकार, ऊपर उल्लिखित अधिकारियों पर विचार करने पर, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैं:

> (1) यह कि संहिता की धारा 227 के तहत आरोप तय करने के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायमूर्ति के पास यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए साक्ष्यों को जांचने और तौलने की निस्संदेह शक्ति है कि आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनता गया है या नहीं;
>
> (2) जहॉ कोर्ट के समक्ष रखी गई सामग्री से आरोपी के विरूद्ध घोर संदेह प्रकट होता हो जिसे न्यायालय में उपयुक्त तरह से बताया नहीं गया हो, न्यायालय द्वारा आरोप लगाने और मुकदमा चलाना पूरी तरह न्यायोचित है।;
>
> (3) प्रथम दृष्टया मामले को निर्धारित करने का परीक्षण स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा और इसके लिए सार्वभौमिक अनुप्रयोग का नियम बनाना मुश्किल है। हालाँकि, कुल मिलाकर, यदि दो दृष्टिकोण समान रूप से संभव हैं और कुछ संदेह पैदा होने पर लेकिन आरोपी के खिलाफ गंभीर संदेह नहीं होने पर, न्यायमूर्ति इस बात से

संतुष्ट है कि उसके सामने प्रस्तुत किए गए साक्ष्य हैं तो पूरी तरह से यह उसके अधिकार में होगा कि वह आरोपी को दोषमुक्त करे।

(4) संहिता की धारा 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय न्यायमूर्ति, जो वर्तमान संहिता के तहत एक वरिष्ठ और अनुभवी न्यायालय है, केवल एक डाकघर या अभियोजन के मुखपत्र के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, बल्कि उसे मामले की व्यापक संभावनाओं, न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों और दस्तावेजों का कुल प्रभाव, मामले में दिखाई देने वाली कोई बुनियादी कमज़ोरियाँ इत्यादि पर विचार करना होगा। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि न्यायमूर्ति को मामले के पक्ष और विपक्ष की गहन जाँच करनी चाहिए और साक्ष्यों को ऐसे तौलना चाहिए जैसे कि वह कोई सुनवाई कर रहा हो।

22. उपरोक्त कानूनी घोषणा के मद्देनजर, रिकॉर्ड के अवलोकन से पता चलता है कि वर्तमान मामले में एक ही विवादित कार्य और बिल से संबंधित दस्तावेजों के निम्नलिखित 3 सेट न्यायालय के समक्ष उपलब्ध हैं।

23. पहले सेट में याचिकाकर्ता के खिलाफ दायर आरोप-पत्र और उसके समर्थन में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज शामिल हैं। (इसे इसके बाद "दस्तावेजों का पहला सेट" कहा जाएगा)

24. दूसरे सेट में उसी विवादित कार्य व बिल के संबंध में सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत याचिकाकर्ता द्वारा यू.आई.टी. बीकानेर से प्राप्त दस्तावेज शामिल हैं। (इसे इसके बाद "दस्तावेजों का दूसरा सेट" कहा जाएगा)

25. तीसरे सेट में याचिकाकर्ता द्वारा ट्रैप बिछाने वाले अधिकारी (टी.एल.ओ.) परबत सिंह, शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत, कार्यकारी अभियंता प्रेम वशिष्ठ, सहायक अभियंता महावीर प्रसाद टाक के खिलाफ दायर एफ.आई.आर. और उस जांच के संबंध में दस्तावेजों (इसे इसके बाद "दस्तावेजों का तीसरा सेट" कहा जाएगा)।

26. दस्तावेजों के उक्त सभी 3 सेटों के प्रथम दृष्टया अवलोकन के बाद, जो एक ही विवादास्पद कार्य और बिल के संबंध में हैं, निम्नलिखित प्रथम दृष्टया सामग्री को रिकॉर्ड के सामने स्पष्ट रूप से स्पष्ट किया जा सकता है:-

27. दस्तावेजों के पहले सेट के अनुसार, जांच अधिकारी ने जांच से निष्कर्ष निकाला कि शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत ने विवादित कार्य जून, 2015 में पूरा कर लिया था; कि तत्कालीन कनिष्ठ अभियंता प्रवीण कुमार कुमावत ने कार्य को एम.बी. पृष्ठ संख्या 10 से 16 पर संख्या 337 में दर्ज किया; कनिष्ठ

अभियंता ने बिल बनाकर दिनांक 10.06.2015 को सहायक अभियंता महावीर प्रसाद को भेज दिया; कि तत्कालीन सहायक अभियंता महावीर प्रसाद ने बिल के साथ-साथ एम.बी. की भी जाँच की, उस पर अपने हस्ताक्षर किये और आगे की कार्रवाई के लिए कार्यकारी अभियंता प्रेम वशिष्ट को भेज दिया; कि दिनांक 26.08.2015 को अधिशाषी अभियंता प्रेम वशिष्ट ने विवादित कार्य का भौतिक निरीक्षण किया तथा माप एम.बी. में दर्ज पाये जाने पर और विवादित बिल में गणना की गई वैल्यूएशन "सही" होने पर उन्होंने 'नोट चेक किया' लिखकर एम.बी. में अपने हस्ताक्षर किए। इसके बाद, विवादित बिल भुगतान प्रक्रिया के लिए उसी दिन यानी 26.08.2015 को याचिकाकर्ता को सौंप दिया गया। 18.09.2015 को ट्रैप कार्यवाही के बाद जब याचिकाकर्ता को उसके कार्यालय में ले जाया गया, तो उसने अपनी अलमारी से विवादित बिल से संबंधित रिकॉर्ड निकालकर टी.एल.ओ. को सौंप दिया, जिसकी प्रतियां टी.एल.ओ. ने अपने कब्जे में ले लीं। ये सभी तथ्य और साक्ष्य दस्तावेजों के पहले सेट का सार हैं।

28. जबकि, याचिकाकर्ता के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए इन सभी तथाकथित साक्ष्यों के विपरीत, दस्तावेजों के दूसरे सेट से पता चलता है कि यू.आई.टी. बीकानेर ने ए.सी.बी. संपूर्ण 128 पेज की फाइल की प्रति तथा एम.बी. संख्या 337 की प्रति जिसमें पृष्ठ 1 से 21 शामिल हैं लेकिन अभियोजन पक्ष ने पूरे रिकॉर्ड को अभियोजन मामले का आधार बनाने के बजाय अपनी सुविधा और आवश्यकता के अनुसार केवल चयनित दस्तावेजों को वर्तमान आरोप-पत्र का हिस्सा बनाया।

29. इस तथ्य की पुष्टि दस्तावेजों के दूसरे सेट में उपलब्ध कार्यालय नोट संख्या 36 से होती है, जिससे पता चलता है कि विवादित बिल 06.10.2015 को यू.आई.टी. की लेखा शाखा में प्रस्तुत किया गया था। तथा उसी दिन अन्य आपत्तियों के अतिरिक्त इस आशय की एक आपत्ति रिकार्ड पर आयी कि विवादित एम.बी. पर उसे जारी करने वाले तत्कालीन अधिशाषी अभियंता ओम प्रकाश गोदारा के हस्ताक्षर नहीं थे। दूसरा तथ्य यह है कि कार्य की माप विवादित एम.बी. के पृष्ठ संख्या 1 से 16 तक दर्ज की गई थी; कि दिनांक 08.10.2015 को तीनों अभियंताओं ने संयुक्त रूप से कार्य का भौतिक सत्यापन किया था।

इसके बाद कार्यपालक अभियंता ने विवादित बिल को 16.10.2015 को भुगतान के लिए पारित कर दिया था।

30. इसका मतलब यह है कि विवादित बिल 16.10.2015 से पहले लेखा शाखा में या याचिकाकर्ता तक नहीं पहुंच सका क्योंकि यह उस दिन तक सभी मामलों में पूरा नहीं हुआ था। इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा बिल निपटाने का प्रश्न 16.10.2015 के बाद ही उठ सकता था, उससे पहले नहीं। ट्रैप के दिन यानी 18.09.2015 को, याचिकाकर्ता के पास निपटाने के लिए विवादित बिल नहीं था।

31. वर्तमान आरोप-पत्र के अवलोकन से प्रथम दृष्टया यह भी प्रतीत होता है कि दिनांक 18.09.2015 को ट्रैप कार्यवाही के पश्चात बिल फ़ाइल की प्रति वास्तव में टी.एल.ओ. द्वारा अपने कब्जे में ले ली गई होनी, इस आशय का मेमो अवश्य तैयार किया गया होगा। ज्ञापन का अभाव इस बात को पुष्ट करता है कि दिनांक 18.09.2015 को विवादित बिल भुगतान हेतु कार्यपालक अभियंता द्वारा पारित भी नहीं किया गया था तथा यह कार्यपालक अभियंता के पास ही लंबित था, अत: विवादित बिल की फाइल याचिकाकर्ता का आलमारी में उपलब्ध नहीं हो सकती थी और टी.एल.ओ. द्वारा इसकी प्रति अपने कब्जे में लेने का कोई प्रश्न नहीं हो सकता। दस्तावेजों के दूसरे सेट के उपरोक्त उल्लिखित सार से प्रथम दृष्टया पता चलता है कि दस्तावेजों के पहले सेट में दर्ज तथ्य प्रथम दृष्टया निराधार हैं और मूल बिल फ़ाइल के रिकॉर्ड से परे हैं।

32. दस्तावेज़ों के तीसरे सेट से पता चलता है कि विवादित एम.बी. क्रमांक 337 के पृष्ठ संख्या 1 से 9 को वर्तमान आरोप-पत्र प्रस्तुत करते समय न्यायालय से छुपाया गया, जिसमें वास्तव में विवादित कार्य की माप शामिल थी। इस सेट से यह भी पता चलता है कि एम.बी. के पृष्ठ क्रमांक 10 से 16 पर विवादित कार्य की माप का उल्लेख नहीं है। जैसा कि अभियोजन पक्ष ने दावा किया है; कि एम.बी. संख्या 337 जारी करने वाले तत्कालीन अधिशाषी अभियंता ओम प्रकाश गोदारा के स्थानांतरण के बाद प्रासंगिक समय पर उनके हस्ताक्षर सहित संख्या 337 को मिटा दिया गया और उसके स्थान पर एक नकली एम.बी. से आवेदन पत्र तैयार किया गया, जिस पर जारीकर्ता अधिशाषी अभियंता के हस्ताक्षर नहीं थे। नकली एम.बी. के प्रथम पृष्ठ पर न तो कार्य का नाम और न ही कार्य करने वाली

फर्म का नाम अंकित है; कि वर्तमान एफ.आई.आर. (संख्या 252/2015) की जांच के दौरान कार्यपालक अभियंता, सहायक अभियंता और कनिष्ठ अभियंता तीनों ने सीआरपीसी की धारा 161 के तहत गलत बयान दिया है। जो विवादित कार्य एवं बिल के रिकार्ड के विपरीत हैं। यह दस्तावेज़ों के तीसरे सेट का सार है।

33. विवादित बिल के भुगतान की प्रक्रिया के लिए याचिकाकर्ता द्वारा पूरी की जाने वाली सभी औपचारिकताएं कार्य पूर्णता प्रमाणपत्र जारी करने, विवादित कार्य के भौतिक सत्यापन और कार्यकारी अभियंता द्वारा भुगतान आदेश के लिए पास जारी करने के बाद ही शुरू की जा सकती थीं। प्रथम दृष्टया यह सिद्ध हो चुका है कि विवादित कार्य के संबंध में सक्षम अभियंता द्वारा कभी भी "कार्य पूर्णता प्रमाणपत्र" जारी नहीं किया गया। प्रथम दृष्टया यह सिद्ध हुआ कि विवादित कार्य का भौतिक सत्यापन 08.10.2015 को किया गया था और विवादित बिल को 16.10.2015 को कार्यकारी अभियंता द्वारा भुगतान के लिए क्लियर और पारित कर दिया गया था। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर प्रथम दृष्टया यह पाया गया कि कथित ट्रैप की तिथि 18.09.2015 तक न तो विवादित कार्य का सत्यापन किया गया, न ही कार्य पूर्णता प्रमाणपत्र जारी किया गया और न ही कार्यपालक अभियंता द्वारा भुगतान हेतु बिल जारी किया गया। इसलिए, याचिकाकर्ता के लिए रिश्वत मांगने और शिकायतकर्ता के लिए इसके लिए सहमत होने का कोई अवसर और कारण नहीं था।

34. 18.09.2015 को ट्रैप कार्यवाही की गई थी और यह प्रथम दृष्टया स्पष्ट है कि उस तिथि तक शिकायतकर्ता का कोई भी कार्य याचिकाकर्ता के पास लंबित नहीं था, यहां तक कि विवादित बिल भी कार्यकारी अभियंता द्वारा 18.09.2015 तक भुगतान के लिए स्वीकृत नहीं किया गया था। यद्यपि यह सच है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के प्रावधानों के तहत किसी आरोपी को दोषी ठहराने के लिए कार्यवाही/कार्य का लंबित रहना कोई अनिवार्य शर्त नहीं है, लेकिन कार्य के लंबित न होने का तथ्य महत्वहीन नहीं हो सकता है। मामले के रिकॉर्ड से प्रथम दृष्टया पता चलता है कि कथित जाल की तारीख पर आधिकारिक पक्ष के संबंध में, प्रथम दृष्टया शिकायतकर्ता द्वारा किए गए कार्य के संबंध में मंजूरी के लिए याचिकाकर्ता के पास कोई बिल लंबित नहीं था और इसलिए, शिकायतकर्ता से

रिश्वत की मांग करने और 18.09.2015 को उसका भुगतान करने का जो भी आरोप है, कोई प्रश्न नहीं था। इसके अलावा, प्रथम दृष्टया रिश्वत मांगने का कोई मकसद नहीं था, क्योंकि कथित तौर पर रिश्वत की रकम सौंपे जाने के समय याचिकाकर्ता शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत का पक्ष या विरोध में नहीं कोई कार्य करने की स्थिति में नहीं था। इसलिए 18.09.2015 से पहले न तो शिकायतकर्ता विनोद कुमार कुमावत अपने विवादित बिल के भुगतान को अपने पक्ष में करने की मांग कर सकता था और न ही याचिकाकर्ता कथित काम के बदले पैसे की मांग कर सकता था। उपरोक्त सकारात्मक साक्ष्य के आलोक में, याचिकाकर्ता का यह तर्क कि उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य के लिए कोई आधिकारिक पक्ष नहीं रखा गया ताकि वह शिकायतकर्ता से रिश्वत की मांग करे, निराधार है।

35. जहां तक सरकारी अभियोजक द्वारा अपने तर्कों के समर्थन में प्रस्तुत निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांत का संबंध है, उसके द्वारा उद्धृत सभी निर्णय उसके लिए कोई लाभकारी नहीं हैं। **भावना बाई बनाम घनश्याम 2019 0 सुप्रीम (एससी) 1315** के मामले में, यह माना गया कि आरोप तय करते समय केवल प्रथम दृष्टया मामला देखा जाना चाहिए। इस स्तर पर यह नहीं देखा जाना चाहिए कि मामला उचित संदेह से परे सिद्ध हुआ है या नहीं। आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं और सामग्री का मूल्यांकन करते समय, साक्ष्य के सख्त मानक की आवश्यकता नहीं है।

36. **नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य 2020 0 सुप्रीम (एससी) 45** के मामले में, यह माना गया कि न्यायालय को आरोप के संबंध में साक्ष्य के संभावित मूल्य में गहराई से जाने की ज़रूरत नहीं है और उसे केवल यह देखना है कि क्या कोई प्रथम दृष्टया प्रथमदृष्ट्या मामला सामने आया है या नहीं। सामग्री की सत्यता परीक्षण का विषय है और आरोप तय करते समय इसकी जांच करना आवश्यक नहीं है।

37. **ओंकार नाथ मिश्रा बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली) 2007 0 सुप्रीम (एससी) 1633** के मामले में, यह माना गया कि आरोप तय करने के चरण में यह पता

लगाने के लिए कि क्या उससे उभरने वाले तथ्य, उनके अंकित मूल्य पर लेने पर, कथित अपराध बनाने वाले सभी तत्वों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं, न्यायालय को रिकॉर्ड पर सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन करना आवश्यक है। आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को यह प्रश्न करने के लिए अपना दिमाग लगाना होगा कि क्या आरोपी द्वारा अपराध करने का अनुमान लगाने का कोई आधार है या नहीं।

38. **सज्जन कुमार बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो 2010 0 सुप्रीम (एससी) 885** के मामले में, यह माना गया कि धारा 228 के तहत आरोप तय करते समय या धारा 227 के तहत डिस्चार्ज याचिका पर विचार करते समय सभी का विश्लेषण करना जिसमें सामग्री में पक्ष और विपक्ष, विश्वसनीयता या स्वीकार्यता आदि शामिल हैं न्यायालय का काम नहीं है क्योंकि परीक्षण में सामग्री के साक्ष्य मूल्य को ध्यान में रखना होता है।

39. **श्रीलेखा सेंटिलकुमार बनाम उप एस.पी., सीबीआई, एसीबी, चेन्नई 2019 0 सुप्रीम (एससी) 701,** के मामले में, यह माना गया कि निर्णय के लिए साक्ष्य जोड़ने के बाद उचित परीक्षण की आवश्यकता वाले मुद्दों पर सीआरपीसी की धारा 239 के तहत निर्णय नहीं लिया जा सकता है।

40. **मध्य प्रदेश राज्य बनाम मोहन लाल 2000 0 सुप्रीम (एससी) 1106** के मामले में, यह माना गया कि ठोस न्यायिक दृष्टिकोण यह है कि आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को प्रथम दृष्टया विचार करना होगा कि क्या आरोपियों के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने के लिए साक्ष्य की जांच करने की आवश्यकता नहीं है कि प्रस्तुत सामग्री आरोपी को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है या नहीं। यदि न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि आगे कार्यवाही के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनता है तो आरोप तय करना होगा। इसके विपरीत, यदि किसी साक्ष्य जिसे अभियोजन पक्ष अभियुक्त के अपराध को सिद्ध करने के लिए का प्रस्ताव करता है, भले ही उसे जिरह द्वारा चुनौती दिए जाने से पहले पूरी तरह से स्वीकार कर लिया गया हो या बचाव साक्ष्य यदि कोई हो, द्वारा खंडित किया गया हो, तो यह नहीं दिखाया जा सकता है कि अभियुक्त ने विशेष अपराध किया है तो आरोप रद्द किया जा सकता है।

41. **भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार सामल 1978 0 सुप्रीम (एससी) 346** के मामले में, यह माना गया कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए शब्द पर्याप्त आधार नहीं है, स्पष्ट रूप से दिखाते हैं कि न्यायमूर्ति केवल अभियोजन पक्ष के कहने पर आरोप तय करने वाला डाकघर नहीं है, लेकिन उसे यह निर्धारित करने के लिए मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक दिमाग का प्रयोग करना पड़ता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमे के लिए मामला बनाया गया है या नहीं। इस तथ्य का समाधान करने में, न्यायालय के लिए मामले के पक्ष और विपक्ष में जाने या साक्ष्यों और संभावनाओं को तौल और संतुलित करना आवश्यक नहीं है, जो वास्तव में मुकदमा शुरू होने के बाद का कार्य है। धारा 227 के चरण में, न्यायमूर्ति को केवल यह पता लगाने के लिए साक्ष्यों की जांच करनी होती है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। आधार की पर्याप्तता पुलिस द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्यों या न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों की प्रकृति को ध्यान में रखेगी जो पूर्व दृष्टया खुलासा करते हैं कि आरोपी के खिलाफ संदिग्ध परिस्थितियां हैं ताकि उसके खिलाफ आरोप तय किया जा सके।

42. उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित सिद्धांतों के संबंध में दो राय नहीं हो सकती हैं, लेकिन तत्काल मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, उपरोक्त निर्णयों से कोई लाभ नहीं उठाया जा सकता है जैसा कि उपरोक्त किसी भी मामले में नहीं है। प्रथम दृष्टया स्थापित किया गया था कि अभियोजन पक्ष द्वारा लाया गया मामला झूठे, जाली और मनगढ़ंत दस्तावेजों पर आधारित था और अभियोजन द्वारा जिन साक्ष्यों पर भरोसा किया गया था, वे वास्तविक रिकॉर्ड से परे और विपरीत थे।

43. जहां तक अभियोजन मंजूरी का प्रश्न है, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, प्रथम दृष्टया जांच के दौरान एकत्र किए गए और मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किए गए झूठे, जाली और मनगढ़ंत दस्तावेजों के आधार पर मंजूरी जारी की गई है। याचिकाकर्ता के अनुरोध के बावजूद, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी द्वारा मंजूरी जारी करने से पहले यू.आई.टी. बीकानेर का मूल रिकॉर्ड अवलोकन के लिए नहीं रखा गया था, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने रिकॉर्ड पर सावधानीपूर्वक

और पूर्ण जांच के साथ विचार नहीं किया था, इसलिए अभियोजन स्वीकृति आदेश को कानूनी नहीं माना जा सकता है और उस पर कार्रवाई नहीं की जा सकती है। **चंदन कुमार बसु बनाम बिहार राज्य 2014 0 सुप्रीम (एससी) 515** के मामले में, यह माना गया कि यह अच्छी तरह से तय है कि संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी का प्रश्न संज्ञान के बाद किसी भी समय संज्ञान या आरोप तय होने के तुरंत बाद या मुकदमे के समापन के समय और दोषसिद्धि के बाद भी उठाया जा सकता है।

44. **बिहार राज्य और अन्य बनाम पी.पी. शर्मा ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 1260,** के मामले में इसे इस प्रकार माना गया है:-

"47. जांच अधिकारी कानून का हाथ है और आपराधिक न्याय प्रदान करने और कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए, पुलिस जांच वह आधारशिला है जिस पर आपराधिक मुकदमे की पूरी इमारत टिकी हुई है, इसकी जांच श्रृंखला में किसी त्रुटि के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हो सकती है।

45. इसलिए, उपरोक्त तथ्यों के समग्र विश्लेषण पर, मेरा विचार है कि जांच अधिकारी याचिकाकर्ता के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए प्रथम दृष्टया ठोस सामग्री लाने में विफल रहा है। जांच अधिकारियों का कर्तव्य केवल ऐसे साक्ष्यों के साथ अभियोजन पक्ष के मामले को मजबूत करना है जो न्यायालय को अपराध दर्ज करने में सक्षम बना सके, बल्कि वास्तविक सच्चाई को सामने लाना है, जैसा कि 1974 में **जमुना चौधरी बनाम बिहार राज्य क्रिमिनल लॉ जर्नल 890** के मामले में बताया गया था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए प्रथम दृष्टया यह पाया गया है कि अभियोजन पक्ष वास्तविक सच्चाई को सामने लाने के अपने कर्तव्य में विफल रहा है। यह दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त प्रथम दृष्टया साक्ष्य थे कि रिश्वत की मांग का कारण और मकसद प्रथम दृष्टया सकारात्मक साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है, इसके अलावा, याचिकाकर्ता से कथित रिश्वत की राशि भी बरामद नहीं की गई थी।

46. अभियोजन पक्ष ने यू.आई.टी. से प्राप्त संपूर्ण प्रासंगिक रिकार्ड को आरोप-पत्र का हिस्सा नहीं बनाया है, बल्कि कुछ चुनिंदा दस्तावेजों को अपनी जरूरत

और सुविधा के अनुसार तत्काल आरोप-पत्र के साथ दाखिल किया है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण रिकॉर्ड अभियोजन पक्ष द्वारा न्यायालय से रोक दिए गए हैं, यू.आई.टी. बीकानेर के इंजीनियरों द्वारा कुछ रिकॉर्ड में छेड़छाड़ की गई और कुछ रिकार्ड जाली बनाए गए हैं। परिवादी के साथ षड़यंत्र रचकर कुछ रिकॉर्ड मिटा दिए गए जिसके परिणामस्वरूप परिवादी विनोद कुमार कुमावत सहित कनिष्ठ अभियंता प्रवीण कुमार कुमावत, सहायक अभियंता महावीर प्रसाद टाक और अधिशाषी अभियंता प्रेम वशिष्ठ के खिलाफ आई.पी.सी. की धारा 467, 468, 471, 420, 120ख, 166क, 167 के तहत विवादित बिल एवं एम.बी. के संबंध में दंडनीय अपराध के लिए आरोप-पत्र दायर किया गया। हालाँकि, जांच के बाद टी.एल.ओ. दोषमुक्त कर दिया गया। बिल प्रश्नगत एवं एम.बी. के संबंध में शिकायतकर्ता के साथ-साथ यू.आई.टी. के इंजीनियरों के खिलाफ उपरोक्त आरोप-पत्र दायर करना एक महत्वपूर्ण परिस्थिति है जो प्रथम दृष्टया याचिकाकर्ता के निर्दोष होने के दावे के पक्ष में जाती है।

47. दस्तावेजों के सभी 3 सेटों के संचयी अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लाया गया वर्तमान अभियोजन बाद की आपराधिक जांच में नकली और जाली दस्तावेजों के साथ-साथ दागी सिद्ध हुए साक्ष्यों पर आधारित है, इस प्रकार, यू.आई.टी. बीकानेर के मूल दस्तावेजों में वास्तव में जो दर्ज किया गया है, उसके संबंध में अभियोजन मामले में एक महत्वपूर्ण अस्पष्ट क्षेत्र है और वास्तव में याचिकाकर्ता के खिलाफ दायर आरोप-पत्र का हिस्सा था। दस्तावेजों के दूसरे और तीसरे सेट का सार भी प्रथम दृष्टया सिद्ध करता है कि दस्तावेजों के पहले सेट (वर्तमान आरोप-पत्र) के तथ्य प्रथम दृष्टया झूठे और मूल रिकॉर्ड के विपरीत हैं। याचिकाकर्ता के खिलाफ अभियोजन का आधार जाली, दागी और मनगढ़ंत दस्तावेजों को बनाया गया, जो याचिकाकर्ता के खिलाफ वर्तमान आरोप-पत्र में आए निष्कर्षों को पूरी तरह से गलत सिद्ध करता है। अभियोजन पक्ष जो साक्ष्य प्रस्तावित करता है, भले ही जिरह द्वारा चुनौती दिए जाने से पहले, इस स्तर पर पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जाए, प्रथम दृष्टया यह नहीं दिखा सकता है कि याचिकाकर्ता ने विवादित बिल फ़ाइल के मूल रिकॉर्ड के प्रकाश में कथित अपराध किया है।

48. रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर, याचिकाकर्ता के खिलाफ कथित अपराध करने का कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं है। प्रथम दृष्टया यह मानने का कोई आधार नहीं है कि याचिकाकर्ता ने कथित अपराध किए हैं। याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई मजबूत संदेह नहीं है. आरोप-पत्र प्रस्तुत किया जाना पूरी तरह से निराधार सामग्रियों पर आधारित है और इसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। विद्वान ट्रायल न्यायमूर्ति ने केवल अभियोजन के आरोप को उद्धृत करने के बाद आरोप तय करते समय यांत्रिक रूप से निपटाया है।

49. इसलिए, रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों की सावधानीपूर्वक जांच के बिना, मेरा विनम्र मानना है कि विद्वान ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करने में स्पष्ट त्रुटि की है और इस तरह, न्याय के हित में, आक्षेपित आदेश को कानून की नज़र में कायम नहीं रखा जा सकता है।

50. तदनुसार, तत्काल आपराधिक पुनरीक्षण याचिका की अनुमति दी जाती है। विद्वान सत्र न्यायमूर्ति, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम मामले, बीकानेर द्वारा सत्र प्रकरण संख्या क्रमांक 25.10.2021 में याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करने हेतु पारित आक्षेपित आदेश 7/2016 रद्द कर दिया जाता है। इसके द्वारा याचिकाकर्ता को आरोपित अपराधों से मुक्त किया जाता है।

याचिका मंजूर।

(राजेन्द्र प्रकाश सोनी), न्यायमूर्ति

99-Payal/-

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल**,** द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।